|| श्रीहरिः ||

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |

देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 1: अर्जुनविषादयोग

1/4 (श्लोक 1-14), रविवार, 19 फ़रवरी 2023

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/0ChvFjaqsz8

कर्त्तव्य और मोह

आज छत्रपति शिवाजी महाराज की जयन्ती है। जिनके सम्पूर्ण जीवन में भगवद्गीता प्रतिबिंबित है ऐसे छत्रपति की जयंती के पावन पर्व पर मंगलमय दीप प्रज्ज्वलन के पश्चात माँ सरस्वती, भगवान वेद व्यास, स्वामी गोविन्ददेव गिरि जी महाराज, ज्ञानेश्वर महाराज जी इन सभी के चरणों में वंदन करके भगवद्गीता के प्रथम अध्याय के विवेचन सत्र का प्रारम्भ हुआ।

भगवद्गीता आशय में महत्तम परन्तु आकृति में लघुत्तम ऐसा श्रेष्ठ, पवित्र और अद्भुत ग्रन्थ है। इसमे केवल सात सौ श्लोक हैं लेकिन सारे वेदों का सार इसमे समाहित है। महाभारत को पञ्चम वेद कहा जाता है और चारो वेदों का सार महाभारत में हैं और महाभारत का सार गीता में है। सारे वेदों का सार समाहित करते हुए श्रीभगवान् ने अर्जुन के लिए गीता के माध्यम से ज्ञान की गंगा प्रवाहित की है। गीता का प्रथम अध्याय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस अध्याय में भगवान् के मुख से ज्ञान का एक शब्द भी नहीं कहा गया है। केवल अर्जुन की मनोभूमिका का वर्णन किया है। किन्तु जब तक हम अर्जुन को नहीं समझते, उनका और भगवान् कृष्ण का प्रेम और प्रगाढ़ मैत्री सम्बन्ध नहीं समझते, उनका गुरु-शिष्य का सम्बन्ध नहीं समझते तब तक भगवान् के प्रति समर्पण और विशवास नहीं जागता। जब तक यह समर्पण और शरणागति नहीं आएगी तब तक गीताजी अपने भीतर के रहस्य नहीं खोलेगी। गीता में जो ज्ञान के रत्न है वे हमारे अन्तरंग में प्रतिबिंबित हो ऐसा अगर हमें लगता है तो अर्जुन की मनोभूमिका और अर्जुन व कृष्ण के सम्बन्ध को हमें समझना होगा।

अर्जुन जो नरोत्तम हैं जो धनुर्वेत्ता हैं, जिन्होंने अनेक युद्ध लड़े हैं, कई युद्धों में लड़कर विजय श्री प्राप्त की है। वह अर्जुन जीवन के समराङ्गण में, कुरुक्षेत्र में, अन्तिम विजय के युद्ध में हतोत्साहित हो जाते हैं। मनुष्य क्यों इस प्रकार हतबल हो जाता है? यदि अर्जुन नरोत्तम होते हुए, वीर होते हुए भी इस प्रकार मोहग्रस्त हो जाते हैं तो हम सब तो सामान्य हैं। इसीलिए हम अर्जुन की पंक्ति में बैठे हैं। ज्ञानेश्वर महाराज अर्जुन की महत्ता बताते हुए कहते हैं कि गीता सीखनी है तो ऐसे सीखनी है जिस प्रकार युद्ध के वातावरण में कोलाहल के बीच अर्जुन भगवान के मुखारविन्द से प्रवाहित इस ज्ञान पर पूरी तरह एकाग्र हो जाते हैं।

अहो अर्जुनाचिये पांती | जे परिसणया योग्य होती|

तिही कृपा करुनी संती | अवधान द्यावे ||

अर्जुन के समान जो सुनने के लिए एकाग्र होने के लिए उपदेश ग्रहण के लिए जो पात्र है जिन्होंने स्वयं को इस योग्य बनाया है जो अर्जुन के मनोभावों को पहचानते हैं। भगवान से निष्काम प्रेम करना चाहते हैं। भगवान के कार्यों में प्रविष्ट होना चाहते हैं, माध्यम

बनना चाहते हैं। उन सभी से आग्रह है, कृपया अवधान दीजिए और भगवान के मुखारविंद से निसृत इस गीता रस का पान कीजिए। इसे अपने जीवन में उतारने का प्रयास कीजिएगा।

यह अध्याय महत्वपूर्ण है परन्तु अध्याय को जानने से पहले इसकी पार्श्वभूमि देखना आवश्यक है।

1.1

धृतराष्ट्र उवाच:
धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे, समवेता युयुत्सवः।
मामकाः(फ्) पाण्डवाश्चैव, किमकुर्वत सञ्जय।।1.1।।

धृतराष्ट्र बोले - हे संजय! धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से इकट्ठे हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने भी क्या किया?

विवेचन: इस अध्याय का प्रारंभ धर्म शब्द से होता है और धृतराष्ट्र के मुख से सञ्जय को संबोधित है। धृतराष्ट्र सञ्जय से जानना चाहते हैं कि युद्ध की इच्छा से इकट्ठे हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया।
महाभारत में महाराज पाण्डु के पाँच पुत्र और धृतराष्ट्र के सौ पुत्र हैं। पाण्डव जो वन में पले-बढ़े अपने पिताजी का राज्य जब कुन्ती माता के साथ माँगने आए तो उन्हें वह राज्य देने से अस्वीकार किया गया। बाद में खाण्डव वन उन्हें दिया गया। वहाँ पाण्डवों ने अपने पुरुषार्थ से इन्द्रप्रस्थ नगरी बनाई। वह नगरी देखते हुए दुर्योधन के मन में ईर्ष्या जगी। दुर्योधन ने छल से इन्द्रप्रस्थ भी पाण्डवों से छीन लिया। पहले द्युत खेलकर उनके लिए विडंबना पूर्ण स्थितियाँ बनाईं। उन्हें अपमानित किया गया और उनकी अवहेलना की गई। द्रौपदी को भी दाँव पर लगाया। द्रौपदी जो राज्य की मर्यादा थी उनका चीरहरण करने का प्रयास किया गया। भगवान ने उसे वस्त्र प्रदान किए। बाद में द्रौपदी के श्राप से जब धृतराष्ट्र डर गया तो उन्होंने पाण्डवों का राज्य उनको फिर से प्रदान कर दिया। दुर्योधन ने एक बार फिर द्यूत की चाल चलकर उनका राज्य छीन लिया और बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास पाण्डवों को दिया। द्यूत में शकुनि द्वारा चलाए जाने वाले पासे शकुनि के अधीन थे और उनकी आज्ञा मानते थे। हड्डियों के उन पासों से छल कपट करते हुए, तेरह वर्षों के लिए राज्य छीन लिया था। अज्ञातवास विराट नगरी में बिताने के बाद जब पाण्डवों ने वापस आकर अपना राज्य माँगा तो दुर्योधन ने उन्हें कहा कि सुई की नोक पर जितनी भूमि आएगी उतनी भी मैं तुम्हें नहीं दूँगा। भगवान युद्ध टालने के लिए शांतिदूत बनकर गए। भगवान ने युद्ध के कारण होने वाली प्राणों की हानि को रोकने का प्रयास किया क्योंकि युद्ध दोनों ओर की सेनाओं के लिए घातक होता है। युद्ध में, युवा या तो घायल होते हैं या फिर मृत्यु को प्राप्त होते हैं। इनसे बचने के लिए युद्ध को टालना सभी का कर्त्तव्य होता है। भगवान ने वही किया। शांतिदूत बनकर पाँच गाँव माँगे परंतु दुर्योधन ने वही कहा कि सुई की नोक के बराबर भी भूमि नहीं दूँगा।

यहाँ सञ्जय युद्ध क्षेत्र का वर्णन धृतराष्ट्र को सुना रहे हैं। सञ्जय को भगवान वेदव्यास ने दिव्य दृष्टि प्रदान की थी। व्यास जी पहले धृतराष्ट्र को दिव्य दृष्टि देने गए थे और कहा था कि तुम्हारे कारण, तुम्हारे अपने कुल का सर्वनाश हो रहा है इसलिए तुम इसे देखो। परंतु धृतराष्ट्र ने कहा कि मैंने अब तक कोई अच्छाई नहीं देखी तो बुराई भी क्यों देखूँ? इसलिए सञ्जय को दिव्य दृष्टि दी गई। धृतराष्ट्र सञ्जय से पूछ रहे हैं और सञ्जय सारी बातें यथावत बताते हैं। पहले अध्याय की पार्श्वभूमि यह है।

धृतराष्ट्र का अर्थ भी हम पहले समझें। धृतराष्ट्र का अर्थ है दूसरोंका राष्ट्र हड़प करने वाला। कौरव अधर्म के पक्ष में हैं और उनकी संख्या सौ है। पाण्डव धर्म के पक्षधर है और वे संख्या में पाँच हैं। आज लगभग पाँच हजार वर्ष बाद भी वही स्थिति है। अच्छाई हमें कहीं कहीं दिखाई देती है और बुराई अधिकता से पनपती हुई दिखाई देती है। भगवद्गीता ऐसा ग्रंथ है जो सृष्टि के चिरन्तन काल तक रहेगा। परिस्थितियाँ चाहे बदली हों लेकिन मनुष्य की मनःस्थिति वैसी ही है। उसके अंदर के काम, क्रोध, मद-मत्सर, लोभ-मोह आदि विकार भी वैसे ही हैं। वे और तीव्र हो रहे हैं। भगवद्गीता एक ऐसा सुन्दर मनोवैज्ञानिक ग्रन्थ है जिसमें अर्जुन की मनोभूमिका पर इस अध्याय में प्रकाश डाला है और शुरुआत हुई है **"धर्म क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे"** शब्द से। धर्म शब्द का अर्थ प्रायः हिंदू धर्म आदि या उपासना पद्धति के रूप से जानते हैं। परमात्मा तक पहुंचने के लिए उनके प्रति अपनी भक्ति प्रकट करने के लिए अलग-अलग उपासना पद्धतियाँ, अलग-अलग संप्रदायों में होती हैं। यह धर्म नहीं है।

भगवद्गीता के परिप्रेक्ष्य में धर्म शब्द का अर्थ है - कर्त्तव्य। जैसे मातृ धर्म, पितृ धर्म, हमारी पड़ोसियों के लिए धर्म, समाज धर्म, राष्ट्रधर्म आदि यह सब व्यक्तिगत से लेकर राष्ट्र को समर्पित कर्त्तव्य है। हम मनुष्य समाज में रहते हैं इसलिए हम सभी धार्मिक हैं क्योंकि किसी ना किसी कर्त्तव्य की पूर्ति में लगे हैं। भगवद्गीता का प्रारंभ "धर्म" शब्द से और समापन अंतिम अध्याय के अंतिम श्लोक में "मम" पर होता है अर्थात समग्रता मम धर्मः - मेरा कर्त्तव्य क्या है- इसको गीता परिभाषित करती है।

एक देह में रहते हुए हम विभिन्न दायित्व को पूरा करते हैं। इन धर्म का निर्वाह करते हुए किसका चयन करना इस भ्रान्ति से इस द्वंद्व की उपस्थिति से संघर्ष पैदा होता है। इसी प्रकार अर्जुन के मन में एक दुविधा है। एक उसके परिवार का स्वयं का धर्म है एक उसका राष्ट्र धर्म है। कौन सा धर्म कब निभाना है यह विवेक गीता देती है। भगवद्गीता के पहले श्लोक से ही सार ग्रहण करने वाली मनीषियों में वीराङ्गना अहिल्यादेवी होल्कर भी हैं। उनको गीता पढ़ाने के लिए आए पण्डित जी ने पहला श्लोक पढ़ाते ही अहिल्याजी ने कहा कि मुझे गीता का सार समझ में आ गया। पंडित जी के 'सार' पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया **"क्षेत्रे क्षेत्रे धर्मम् कुरु"** - सब अपने अपने क्षेत्र में अपना अपना कर्त्तव्य उत्तम ढंग से निभाएँ। यदि सब इस कथन का पालन करें तो सृष्टि का संपूर्ण स्वरूप कैसा होगा इसकी कल्पना की जा सकती है।

धृतराष्ट्र के पूछे वाक्य में मनुष्य का तीव्र मोह प्रतिबिम्बित होता है। उन्होंने कहा "मेरे" और पाण्डु के पुत्र। "अपना और पराया" - यह मनुष्य की देह भूमिका है। देह बुद्धि के तीव्र होने पर अपने और पराए का यह विभाजन भी तीव्र होता जाएगा। जैसे-जैसे मोह प्रबल होगा अपने पुत्र में योग्यता हो या ना हो वही सभी स्थान संभालेगा, चाहे संस्था हो या राष्ट्र सब पर उसका अधिकार हो, यह भूमिका प्रबल होगी। धृतराष्ट्र की अत्यधिक प्रबल देह बुद्धि इतनी तीव्र है कि वह पुत्र स्नेह में अन्धा है। ऐसे लोग हर अधर्म के मूल में होते हैं। अधर्म ऐसे ही लोगों के कारण बढ़ता है जो कर्त्तव्य से अधिक मोह पर आश्रित रहते हैं।

संत ज्ञानेश्वर ने धृतराष्ट्र की मनोवृति पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि -

तरी पुत्रस्नेहे मोहितु | धृतराष्ट्र असे पुसतु |
म्हणे संजया सांगे मातु | कुरुक्षेत्रिची ||

पुत्र के स्नेह के कारण मोहित हो गया यह भी नहीं समझता के पुत्र में क्या गुण हैं क्या अवगुण हैं। राजा होकर भी अपनी प्रजा का हित नहीं चाहता। सत्य वचन युधिष्ठिर के पास राज्य सुरक्षित रहेगा यह भी तू जानता नहीं मानता नहीं। उसके ज्ञान चक्षु पर एक पट्टी चढ़ गई है इसलिए धृतराष्ट्र ही इस अधर्म के मूल में है। जहाँ कहीं भी महाभारत होता है देह बुद्धि की तीव्रता के कारण होता है।

1.2

सञ्जय उवाच: दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं(व्ँ), व्यूढं(न्) दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपसङ्गम्य, राजा वचनमब्रवीत्॥1.2॥

संजय बोले - उस समय वज्रव्यूह-से खड़ी हुई पाण्डव-सेना को देखकर राजा दुर्योधन द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन बोला।

विवेचन: सञ्जय धृतराष्ट्र के सारथी हैं। सूत पुत्र अत्यंत सज्जन प्रामाणिक और ज्ञानी हैं। यही कारण है उन्होंने ज्ञान ग्रहण भी किया और भगवान के विश्वरूप का दर्शन भी लिया। स्वयं के लिए भी ज्ञान के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त किया। सञ्जय यहाँ दुर्योधन को राजा सम्बोधित करते हुये कहते हैं कि पाण्डवों की सैन्य व्यूह रचना को देखकर, राजा दुर्योधन गुरु द्रोणाचार्य के पास गया।

दुर्योधन वर्तमान में युवराज है। उसके अहंकार को मामा शकुनि द्वारा निरन्तर पोषित किया जाता है और राजभवन में राजा कहकर पुकारा जाता है। इसलिये सञ्जय भी यहाँ दुर्योधन को राजा संबोधित करते हैं।
दुर्योधन के मन में एक छटपटाहट है, एक संशय है। वास्तव में बुरा करने वाले लोगों को लगता है अच्छा करने वालों के साथ लोग पक्षपाती होते हैं। इसलिए उसे लगता है कि गुरु द्रोण और पितामह भीष्म पाण्डवों के प्रति पक्षपाती हैं। अतः वह ताना

कसने के लिए वहाँ गया है ताकि वे लोग पक्षपात ना करें। गुरु द्रोणाचार्य के पास जाकर उसने अपने मन की बात कही।

1.3

पश्यैतां(म्) पाण्डुपुत्राणाम्, आचार्य महतीं(ञ्) चमूम्। व्यूढां(न्) द्रुपदपुत्रेण, तव शिष्येण धीमता।।1.3।।

हे आचार्य! आपके बुद्धिमान शिष्य द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न के द्वारा व्यूह रचना से खड़ी की हुई पाण्डवों की इस बड़ी भारी सेना को देखिये

विवेचन: धृतराष्ट्र द्वारा पूछे गए प्रश्न के उत्तर में, सञ्जय ने धृतराष्ट्र को बताया कि दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पास जाकर कहा, "हे आचार्य! तुम्हारे अत्यंत बुद्धिमान शिष्य, द्रुपद पुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा रचित पाण्डवों की विशाल सेना की रचना देखो। यहाँ दुर्योधन ने जो बात कही उसमें हम दुर्योधन की भूमिका को स्पष्ट देख सकते हैं। जीवन भर पाण्डवों का राज्य छीनने, द्रौपदी को अपमानित करने का षड्यंत्र करने वाले दुर्योधन के मन में छल है इसलिए उसकी वाणी में कटाक्ष है। वास्तविकता यह है कि कौरवों की ग्यारह अक्षौहिणी सेना के सम्मुख पाण्डवों की सात अक्षौहिणी सेना दुर्योधन को विशाल दिखाई दे रही है। उसके मन में संशय भी है, छल भी है इसलिए कहता है आपका पढ़ाया हुआ अत्यंत बुद्धिमान शिष्य सेना लेकर खड़ा है।

यहाँ एक सत्य और है जो हम सब जानते हैं कि राजकुमारों को पढ़ाने से पूर्व द्रोणाचार्य और राजा द्रुपद एक ही गुरुकुल में पढ़ें और बड़े हुए थे। यह दोनों एक दूसरे के मित्र थे। दोनों ने एक दूसरे की सहायता करने की शपथ ली थी। द्रोणाचार्य निर्धन ब्राह्मण थे। उनकी पत्नी कृपि अपने पुत्र अश्वत्थामा को आटे में पानी और गुड़ मिलाकर दूध कहकर पिलाती थी। एक दिन पुत्र ने अपने मित्र के घर में गाय का दूध पिया। उसके बाद पुत्र ने आटे वाला दूध पीने से मना कर दिया। द्रोणाचार्य यह देख कर दुखी हुए। वे अपने मित्र द्रुपद के पास गाय माँगने गए। द्रुपद ने केवल मना ही नहीं किया किन्तु अपमानित भी किया और कहा, मित्रता बराबर वालों में होती है। एक भिखारी और राजा में मित्रता नहीं हो सकती। अपमान से आक्रोशित होकर द्रोणाचार्य ने जब कौरव और पाण्डव कुमारों को गुरुकुल में पढ़ाया तो गुरु दक्षिणा में, द्रुपद को बन्दी बनाकर लाने की दक्षिणा माँगी। सभी चुप रहे क्योंकि द्रुपद को बंदी बनाना सरल कार्य नहीं था। केवल अर्जुन और भीम ने गुरु दक्षिणा देने का वचन दिया। अर्जुन राजा द्रुपद को बंदी बनाकर द्रोणाचार्य के सामने ले आए। द्रुपद ने ठान लिया कि अर्जुन जैसे वीर को वह अपना जमाई बनाएगा। बाद में द्रुपद ने यज्ञ किया और ऐसा पुत्र माँगा जो आचार्य द्रोण का वध कर सके। राजा द्रुपद ने यज्ञ से आचार्य द्रोण को मारने वाला पुत्र माँगा है यह सत्य द्रोणाचार्य जानते थे। धृष्टद्युम्न का जन्म यद्यपि गुरु द्रोण को समाप्त करने के लिए हुआ है, परंतु उस युग में ऐसे महानुभाव थे कि जब राजा द्रुपद ने धनुर्विद्या के शिक्षण के लिए पुत्र को गुरु द्रोणाचार्य के पास भेजा और द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न को शिक्षा प्रदान की।

इन सारी घटनाओं से परिचित दुर्योधन द्रोणाचार्य से यह वाक्य कहता है कि आपका बुद्धिमान शिष्य द्रुपद पुत्र सेना सजाकर खड़ा है।

1.4, 1.5, 1.6

**अत्र शूरा महेष्वासा, भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च, द्रुपदश्च महारथः।।1.4।।
धृष्टकेतुश्चेकितानः(ख्), काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च, शैब्यश्च नरपुङ्गवः।।1.5।।
युधामन्युश्च विक्रान्त, उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च, सर्व एव महारथाः।।1.6।।**

यहाँ (पाण्डवों की सेना में) बड़े-बड़े शूरवीर हैं, (जिनके) बहुत बड़े-बड़े धनुष हैं तथा (जो) युद्ध में भीम और अर्जुन के समान हैं। (उनमें) युयुधान (सात्यकि), राजा विराट और महारथी द्रुपद (भी हैं)। धृष्टकेतु और चेकितान तथा पराक्रमी काशिराज (भी हैं)।

पुरुजित् और कुन्तिभोज – (ये दोनों भाई) तथा मनुष्यों में श्रेष्ठ शैब्य (भी हैं)। पराक्रमी युधामन्यु और पराक्रमी उत्तमौजा (भी हैं)। सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र (भी हैं)। (ये) सब के सब महारथी हैं। (1.4-1.6)

विवेचन: इसके पश्चात दुर्योधन ने गुरु द्रोणाचार्य के सम्मुख पाण्डव सेना का वर्णन किया। उसने बताया कि पाण्डवों की सेना कैसी है उसमें में कौन से महारथी हैं। इन तीन श्लोकों में महर्षि वेदव्यास जी ने पाण्डव सेना के सभी वीरों का वर्णन किया है। बड़े-बड़े धनुष धारण किए हुए वीर यहाँ इस सैन्य समूह में एकत्रित हैं। यहाँ वह भीम और अर्जुन के नाम सबसे पहले लेता है। दुर्योधन के मन में भीम और अर्जुन के प्रति भय था। मनुष्य को जिससे भय लगता है, भय के कारण उसी का चिन्तन करता है। जिन से डरता है उनका नाम स्मरण करता है। मनुष्य की मानसिकता यही है कि जिसका भय हो या जिसके प्रति द्वेष भाव हो उसका चिन्तन बार-बार करता है। भीम और अर्जुन के प्रति दुर्योधन के मन में गहरा द्वेष भाव है इसलिए वो कहता है भीम और अर्जुन के समान यहाँ अनेक वीर हैं।

युयुधान अर्थात सात्यिकि, जिसने अर्जुन से धनुर्विद्या सीखी है, यह यादव है। विराट, जिसके नगर में पांडव अज्ञातवास में रहे थे। द्रुपद जो द्रौपदी के पिता हैं। धृष्टकेतु जो शिशुपाल के पुत्र हैं। सौ अपराधों को क्षमा करने के बाद श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से शिशुपाल का वध किया था। उसका पुत्र धृष्टकेतु पाण्डवों की ओर से महाभारत के युद्ध में सम्मिलित हुआ। चेकितान, शिशुपाल के पुत्र के सारथी थे। काशिराज जैसे वीर हैं। पुरुजित एवं कुन्तिभोज दोनों माता कुन्ती के भाई हैं, अर्थात पाण्डवों के मामा हैं। शैब्य, शिबी देश के राजा, युधिष्ठिर के श्वसुर जैसे नर श्रेष्ठ यहां एकत्रित हैं।अत्यन्त पराक्रमी युधामन्यु और उत्तमौजा दोनों वीर, पाण्डवों की व्यूह रचना में अर्जुन के रथ के रक्षकों की भूमिका में हैं। सुभद्रा एवं अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु और द्रौपदी के पांचों पुत्र - प्रतिविन्ध्य, सुतसोम,श्रुतकर्मा, शतानीक श्रुतसेन हैं।

यहां महारथियों का वर्णन आया है। महारथी का अर्थ है एक समय में दस हजार योद्धाओं के साथ अकेला लड़ने की क्षमता रखने वाला। यह सभी पाण्डवों की अक्षौहिणी सेना के उप सेनापति हैं। इस रचना का दुर्योधन द्वारा वर्णन किया गया है।

1.7

अस्माकं(न्) तु विशिष्टा ये, तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य, संज्ञार्थं(न्) तान्ब्रवीमि ते।।1.7।।

हे द्विजोत्तम! हमारे पक्ष में भी जो मुख्य (हैं), उन पर भी (आप) ध्यान दीजिये। आपको याद दिलाने के लिये मेरी सेना के (जो) नायक हैं, उनको (मैं) कहता हूँ।

विवेचन: तद्उपरान्त दुर्योधन अपनी सेना का वर्णन करते हैं। यहाँ गुरु द्रोणाचार्य के लिए दुर्योधन आदरपूर्ण संबोधन देते हुए कहते हैं हे द्विजों में श्रेष्ठ! हमारी ओर से जो विशिष्ट हैं, श्रेष्ठ है उन्हें भी जान लीजिए। आपकी जानकारी के लिए मेरी सेना के जो नायक है मैं उनका परिचय आपको दूँगा।

1.8

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च, कृपश्च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च, सौमदत्तिस्तथैव च।।1.8।।

आप (द्रोणाचार्य) और पितामह भीष्म तथा कर्ण और संग्राम विजयी कृपाचार्य तथा वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा।

विवेचन: आप स्वयं गुरु द्रोणाचार्य,भीष्म पितामह, जो सेनापति हैं। अंगराज कर्ण, जो अभी सेना में नहीं है क्योंकि उसका प्रण है कि उसे अर्धरथी अधिरथी कहने वाले भीष्म पितामह के रणभूमि में रहते हुए वह युद्ध क्षेत्र में नहीं आएगा। युद्ध में विजयी होने वाले कृपाचार्य हैं। कौरवों के पक्ष में यह बड़े-बड़े वीर हैं जो सदैव युद्ध में विजयी रहे हैं।

गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा, विकर्ण एवं सोमदत्त इनके महारथी हैं। विकर्ण - जिन्हें सज्जन कौरव कहा गया क्योंकि द्रौपदी के चीरहरण में केवल उन्होंने ही इस दुष्ट कृत्य के विरुद्ध आवाज उठाई थी। अपनी भाभी की विडम्बनापूर्ण स्थिति को देखकर उसने खड़े होकर विरोध जताया और सभा का त्याग किया था। इसको मारते समय भीमसेन रोए हैं। संपूर्ण महाभारत में दो ही बार भीमसेन के रोने का वर्णन है एक बार जब वनवास में कीचक ने द्रौपदी को लात मारी और दूसरी बार जब विकर्ण का वध किया।

1.9

अन्ये च बहवः(श्), शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः(स्), सर्वे युद्धविशारदाः।।1.9।।

इनके अतिरिक्त बहुत से शूरवीर हैं, (जिन्होंने) मेरे लिये अपने जीने की इच्छा का भी त्याग कर दिया है और जो अनेक प्रकार के शस्त्र-अस्त्रों को चलाने वाले हैं (तथा जो) सब के सब युद्धकला में अत्यन्त चतुर हैं।

विवेचन: इस वर्णन के बाद दुर्योधन कहते हैं मेरे लिए अपने जीवन को त्यागने की इच्छा से आए हुए बहुत से शूरवीर यहाँ एकत्रित हैं जो शस्त्र विद्या में पारङ्गत और विभिन्न अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित हैं।

1.10

अपर्याप्तं(न्) तदस्माकं(म्), बलं(म्) भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं(न्) त्विदमेतेषां(म्), बलं(म्) भीमाभिरक्षितम्।।1.10।।

द्रोणाचार्य को चुप देखकर दुर्योधन के मन में विचार हुआ कि वास्तव में - वह हमारी सेना पाण्डवों पर विजय करने में अपर्याप्त है, असमर्थ है; क्योंकि उसके संरक्षक (उभय पक्षपाती) भीष्म हैं। परन्तु इन पाण्डवों की यह सेना (हम पर विजय करने में) पर्याप्त है, समर्थ है; (क्योंकि) इसके संरक्षक (निज सेना पक्षपाती) भीमसेन हैं।

विवेचन: भीष्म पितामह जो हमारी सेना के सेनापति हैं उनके द्वारा रक्षित हमारी इस सेना का बल अपर्याप्त है परन्तु भीम द्वारा रक्षित इन लोगों की सेना के लिए यह पर्याप्त लगता है। यहाँ एक बात द्रष्टव्य है भीम सेनापति नहीं है परंतु दुर्योधन का कट्टर शत्रु भीम ही है। वह जानता है कि अन्ततोगत्वा जो युद्ध होने वाला है उसमें अन्तिम युद्ध भीम से ही होना है। भीम ने दुर्योधन की जंघा चीर कर उसके रक्त से द्रौपदी के केश बाँधने की प्रतिज्ञा की है। द्रौपदी ने अपने केश खुले रखे हैं क्योंकि दुःशासन द्रौपदी के केश पकड़कर उसे खींचकर भरी सभा में लाया था।

यहाँ एक दूसरा अर्थ भी है कि दुर्योधन को लगता है कि हमारी सेना अजिंक्य है परंतु भीम जिसकी रक्षा कर रहा है वह सेना उनके लिए पर्याप्त है ऐसा उसके मन में कोलाहल है। ग्यारह अक्षौहिणी सेना उसके पास है और पाण्डवों के पास केवल सात अक्षौहिणी सेना है फिर भी वह दुर्योधन को पर्याप्त लगती है।

एक अक्षौहिणी सेना में २१,८७० रथ, २१,८७० हाथी, ६५,६१० घोड़े और १,०९,३५० पैदल सैनिक होते हैं। पाण्डवों की सेना कौरवों की सेना से चार अक्षौहिणी कम थी। फिर भी दुर्योधन को पाण्डवों की सेना पर्याप्त और कौरवों की सेना अपर्याप्त लग रही है। अपने मन की चंचलता के कारण ऐसा मनोभाव लिए हुए दुर्योधन अपनी सेना को युद्ध के लिए आदेश देते हैं।

1.11

अयनेषु च सर्वेषु, यथाभागमवस्थिताः।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु, भवन्तः(स्) सर्व एव हि।।1.11।।

दुर्योधन बाह्य दृष्टि से अपनी सेना के महारथियों से बोला - आप सब के सब लोग सभी मोर्चों पर अपनी-अपनी जगह दृढ़ता से

स्थित रहते हुए ही निश्चित रूप से पितामह भीष्म की चारों ओर से रक्षा करें।

विवेचन: युद्ध चुनौतियों का क्षेत्र है संघर्ष का क्षेत्र है। संत तुकाराम महाराज जी कहते हैं

रात्रन्दीन आम्हा युद्धाचा प्रसंग |
अंतर्बाह्य जग आणि मन ||

युद्ध केवल कुरुक्षेत्र (हरियाणा) में चलने वाला ही युद्ध नहीं है। हमारे कुरुक्षेत्र अर्थात हमारे कर्म क्षेत्र पर भी रात दिन कुछ ना कुछ संघर्ष की स्थिति निर्मित होती है। यदि हमारे घर में कोई रोगी है उसे अस्पताल पहुँचाना है तो व्यवस्था करते हुए भी युद्धजन्य स्थिति निर्मित हो जाती है। कार्यक्षेत्र बिजली विभाग से जुड़ा हो तो वहाँ भी, कभी बिजली चली जाए या कहीं बिजली के स्तम्भ गिर जाएँ, ऐसी कई चुनौतीपूर्ण स्थितियों का निर्माण हो जाता है। इन चुनौतीपूर्ण स्थितियों में क्या निर्णय लिया जाए यह सिखाने वाला अत्यंत सुंदर भगवद्गीता, यह गीत है। लेकिन इसकी भाषा अलग है। भगवद्गीता भगवान के मुख से प्रवाहित गीत है। अपने मन की अस्थिरता के कारण दुर्योधन कहते हैं कि सभी लोग सुन लें। अब मुझे लगता है कि पाण्डवों की सेना पर्याप्त है अपनी सेना अपर्याप्त है। इसलिए अपने-अपने व्यूह द्वार पर स्थित रहकर भीष्म की रक्षा कीजिए । दुर्योधन ने यह आदेश अपनी सेना को दिया है कि सभी लोग अपने-अपने स्थान खड़े रहकर सेनापति भीष्म पितामह की रक्षा कीजिए।

1.12

तस्य सञ्जनयन्हर्षं(ङ्), कुरुवृद्धः(फ्) पितामहः।
सिंहनादं(वँ) विनद्योच्चैः(श्), शङ्खं(न्) दध्मौ प्रतापवान्॥1.12॥

उस (दुर्योधन) के (हृदय में) हर्ष उत्पन्न करते हुए कौरवों में वृद्ध प्रभावशाली पितामह भीष्म ने सिंह के समान गरज कर जोर से शंख बजाया।

विवेचन: दुर्योधन के अशांत चित्त को शांति प्रदान करने के लिए उसके संशय को दूर करने के लिए कुरु वंश में सबसे वयोवृद्ध पितामह भीष्म जो युद्ध के समय 150 वर्ष के थे ने शंख बजाया। उस युग में लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व मनुष्य की आयु की मर्यादा आज की अपेक्षा अधिक थी। नरोत्तम अर्जुन और भगवान श्री कृष्ण जो 70-75 वर्ष के थे पर युवा कहलाते थे।

दुर्योधन के मन के संशय को पहचानते हुए भीष्म पितामह ने सिंहनाद किया। उसके बाद अपना शंख बजाया। युद्ध के प्रारंभ का पहला शंख कौरवों की ओर से बजाया गया। युद्ध के लिए पार्श्वभूमि का निर्माण कौरवों के कारण हुआ है। भगवान ने युद्ध को टालने का पूरा प्रयास किया है।

1.13

ततः(श्) शङ्खाश्च भेर्यश्च, पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त, स शब्दस्तुमुलोऽभवत्।।1.13।।

उसके बाद शंख और भेरी (नगाड़े) तथा ढोल, मृदंग और नरसिंघे बाजे एक साथ ही बज उठे। (उनका) वह शब्द बड़ा भयंकर हुआ।

विवेचन: वीर रस के सञ्चार के लिए शंख नगाड़ा आदि युद्ध के वाद्य बजाए जाते थे। सभी वाद्य बजने लगे। छत्रपति शिवाजी महाराज के सैनिकों की गर्जना थी- "हर हर महादेव ", "जगदम्बा माता की जय"। इस प्रकार वीरता का संचार होता है। यह युद्ध भूमि की भाषा है। इससे वीरों में शौर्य का स्फुरण होता है परंतु कायरों में भय का सञ्चार होता है। भीष्म पितामह के शंखनाद के बाद शंख बजने लगे नगाड़े, ढोल, रणभेरी के स्वर सब ओर से बजने लगे और भयंकर शब्द नाद होने लगा।

1.14

ततः(श्) श्वेतैर्हयैर्युक्ते, महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः(फ्) पाण्डवश्चैव, दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः।।1.14।।

उसके बाद सफेद घोड़ों से युक्त महान रथ पर बैठे हुए लक्ष्मीपति भगवान् श्रीकृष्ण और पाण्डुपुत्र अर्जुन ने भी दिव्य शंखों को बड़े जोर से बजाया।

विवेचन: इसके बाद कुरुक्षेत्र में, नरोत्तम अर्जुन और लक्ष्मीपति माधव भगवान श्री कृष्ण का रथ प्रकट हुआ। श्रीमद्भगवद्गीता के दो नायक, एक भगवान श्रीकृष्ण जो अर्जुन के रथ के सारथी हैं और दूसरे नरोत्तम अर्जुन जो धनुर्विद्या में निपुण पाण्डु के मझले पुत्र, इन दोनों का युद्धक्षेत्र में अवतरण हुआ। वे चार सफेद घोड़ों वाले दिव्य रथ में अवतरित हुए और अपने-अपने दिव्य शंख बजाए। उत्तम रथ में विराजित हृषीकेश श्रीकृष्ण का शंख पाञ्चजन्य एवं अर्जुन नें देवदत्त शंख का उद्घोष किया।

यह रथ अग्निदेव ने उन्हें दिया है। खाण्डव दाह के प्रसंग में अग्निदेव ने प्रसन्न होकर अर्जुन को गाण्डीव धनुष दिया। अर्जुन ने कहा कि दिव्यास्त्र भी चाहिए तब अग्निदेव ने कहा कि वह भी तुम्हे मिलेगा और उसे यह दिव्य रथ प्रदान किया। भगवान् से प्रसन्न होकर अग्निनारायण ने भी कुछ माँगने को कहा तब भगवान् ने कहा कि अपने परम प्रिय धनुर्धारी पार्थ की प्रीति मुझे जन्म-जन्म तक पाने का वरदान दो। अर्जुन के इस दिव्य रथ पर कपिध्वज पताका है। साक्षात हनुमान जी रथ पर विराजित हैं। रथ पर अर्जुन के सामने हैं हरि अर्थात श्रीकृष्ण और अर्जुन के पीछे हैं हर-हर शंकर भगवान। ऐसा साथ होते हुए भी अर्जुन क्यों हतोत्साहित हुए। जिसके सारथी बनने के लिए श्री कृष्ण आए नहीं बल्कि अर्जुन ने उनसे कहा कि मेरे सारथी बन जाइए। इस प्रसंग को भी सब जानते हैं के युद्ध मैं सहायता माँगने के लिए अर्जुन और दुर्योधन दोनों श्रीकृष्ण के पास गए थे। दुर्योधन सिरहाने बैठे और अर्जुन चरणों में बैठ गए। उठने के बाद श्री कृष्ण ने अर्जुन से पूछा अर्जुन तुम कब आए। दुर्योधन ने कहा कि वह पहले आया है। श्रीकृष्ण ने कहा कि मैंने तो पहले अर्जुन को देखा है। वास्तव में एक परम्परा भी है कि चयन करने की स्थिति में पहला अधिकार छोटे का होता है। इस दृष्टि से भी अर्जुन छोटे हैं इसलिए वे पहले अपनी बात रखें। श्रीकृष्ण जानते थे कि दोनों युद्ध के लिए सहायता माँगने आए हैं इसलिए एक विकल्प रखा, "एक ओर मेरी एक अक्षौहिणी शस्त्रों से सुसज्जित नारायणी सेना और दूसरी ओर निशस्त्र मैं। चयन कर लीजिए। "अर्जुन ने क्षण भर का विलंब किए बिना कह दिया मेरा युद्ध लड़ने के लिए मैं सक्षम हूँ मुझे आप चाहिए निशस्त्र। श्रीकृष्ण ने कहा, अरे पगले! मुझ निशस्त्र को लेकर क्या करेगा? अर्जुन ने कहा," आप मेरे सारथी बनो और दुविधा की स्थिति में मुझे सही मार्ग पर ले चलो।

भगवान का चयन किसलिए करना है? मेरे अंदर सारथी रूप में भगवान विराजमान रहें यह भावना क्यों रखनी चाहिए? अपनी बागडोर भगवान के हाथ में क्यों सौंपनी चाहिए? उत्तर यही है कि हम जीवन में कभी भी गलत रास्ते पर जाने लगे तो ईश्वर हमें सही मार्ग पर लाएँ। हम अपना युद्ध स्वयं लड़ने में सक्षम हैं। यह बताने वाले अर्जुन की पंक्ति में हम सब बैठे हैं। दुर्योधन तो छटपटाए होंगे कि कहीं अर्जुन एक अक्षौहिणी सेना ना माँग ले। उसे अक्षौहिणी सेना चाहिए थी। जिसे जो चाहिए था वही मिला। यदि चुनने का अधिकार दुर्योधन को मिलता और वह अक्षौहिणी सेना ले लेता तब यही लगता कि अर्जुन के पास कोई विकल्प ही नहीं था इसलिए अर्जुन को निशस्त्र भगवान को चुनना पड़ा। परंतु पहला विकल्प अर्जुन को मिला और उसने भगवान का चयन किया।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

राजभोग समृद्धि से जीवन का उन्नयन नहीं होता। जीवन की देह बुद्धि और बढ़ती जाती है। आत्म बुद्धि नहीं जगती यह तो भगवान आप ही की कृपा प्रसाद से होता है। राज्य भोग समृद्धि जितनी भी आए उतनी ही लालसा बढ़ती जाती हैं। जब तक आप साथ न हों, जीवन का कल्याण आत्म शांति प्राप्त नहीं होगी। इसलिए मैं आपका चयन करता हूँ।

अर्जुन ने इसलिए भगवान का चयन किया। भगवान ने भी जगह-जगह पर उनका साथ निभाया है हम जानते हैं। परंतु भगवान का साथ होते हुए भी धनुर्धारी अर्जुन क्यों हतोत्साहित होते हैं। क्या ऐसा मनोवैज्ञानिक अवस्था के कारण हुआ? इन विषय पर अगले सत्र में प्रकाश डालेंगे।

इसके साथ आज के सत्र का समापन हुआ एवं प्रश्नोत्तर हुए।

प्रश्नोत्तरी

प्रश्नकर्ता : सुधा दीदी

प्रश्न - भगवान कृष्ण ने युद्ध टालने का पूरा प्रयास किया वे शान्ति दूत बनकर गए और युद्ध करने की उनकी मंशा भी नहीं थी फिर भी गांधारी का श्राप उनको क्यों मिला? उनका कोई दोष नहीं था फिर श्राप क्यों मिला?

उत्तर - श्राप इसलिए दिया क्योंकि उनकी क्षमता पर गांधारी को पूरा विश्वास था कि भगवान अगर युद्ध पूरा टालना चाहते तो टाल सकते थे। कभी-कभी ऐसा होता है कि बुराई में जो पूरी तरह डूबे हुए लोग होते हैं उनका एनकाउंटर करना ही पड़ता है। इन्हें समझा-बुझाकर सही रास्ते पर नहीं ला सकते। कौरवों की भी यही अवस्था है अगर भगवान ने यदि युद्ध टाला भी होता तो भी वे सही रास्ते पर नहीं आते। बार- बार पाण्डवों को पीड़ित करते। गांधारी जानती है कि वे युद्ध टाल सकते थे मगर भगवान ने युद्ध होने दिया है। इसका अर्थ यह है कि भगवान युद्ध के पक्ष में हैं लेकिन उसे टालने का पूरा -पूरा प्रयास किया है। अपने पर कोई ब्लेम नहीं लिया है। शांति दूत बनकर गए। लेकिन गांधारी एक तपस्विनी है, एक पतिव्रता भी है, पतिव्रत का तेज होता है। जिसके कारण वो सब समझती है। इसी कारण उसने श्राप दिया और अपनी तेजस्विता समाप्त कर दी। यह श्राप इसी कारण दिया कि आप युद्ध टाल सकते थे परंतु नहीं टाला मेरे सारे पुत्र समाप्त हो गए।

प्रश्नकर्ता : रामचन्द्र भैय्या

प्रश्न - व्याकरण की जिज्ञासा से से जुड़ा प्रश्न है।

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि ।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥

इसमें महारथः एकवचन है इसलिए द्रुपद के साथ आया है और दुर्योधन ने जानबूझकर गुरु द्रोण के सामने उसे महारथी द्रुपद कहकर पुकारा है।

उत्तर- यह जिज्ञासा बिल्कुल सत्य है यहां महारथी द्रुपद के साथ ही है अंत में दुर्योधन सभी को महारथी कह देता है।

प्रश्नकर्ता : नागमणि दीदी

प्रश्न - हिंदी पूरी तरह समझ में नहीं आई पर जितनाआपको सुना वह आनंदित करने वाला है।

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान् ।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥

इस श्लोक में सभी को महारथाः कहा गया है।

उत्तर - जी, यह बहुवचन के लिए है। अतः सभी के लिए इसका प्रयोग हुआ है।

प्रश्नकर्ता : बजरङ्ग लाल भैय्या

प्रश्न -क्रोध पर कैसे काबू पाया जाए?

उत्तर - क्रोध पर काबू पाना कठिन लगता है। क्रोध का निर्माण क्यों हो रहा है इसके मूल में जाना होगा। किसी ने मेरी अपेक्षा

के अनुसार काम नहीं किया। मेरे मन की बात नहीं रखी, किसी ने मेरे मन के विपरीत कुछ बात की इसके कारण हमारे मन में क्रोध आता है। जब हमारी इच्छा की पूर्ति नहीं होती उसमें कोई व्यवधान डाल देता है। जो बात करना चाहती थी वह नहीं हो पाई। इसके कारण परिस्थिति के कारण भी और कभी-कभी स्वयं पर भी क्रोध आता है।

हम लोग साक्षी भाव से अपने क्रोध को देखें। एक बार क्रोधित होने पर हमारे मुख से जो बातें निकलती हैं तो बाद में उसका मूल्यांकन करें कि ऐसा क्या हुआ था? क्यों मुझे क्रोध आया? जब आप इस पर विचार करने लगेंगे तो क्रोध थमने लगेगा। यह क्रोध तुरन्त नहीं आएगा। अगली बार आने के समय में आप को जागरूक करेगा कि क्रोध आ रहा है क्योंकि आपने उसे साक्षी भाव से देखा था। तभी हम धीरे-धीरे क्रोध को काबू में रख सकते हैं मगर एक बात ध्यान में रखिए कि किसी के कल्याण के लिए यदि हम क्रोध करते हैं जैसे माँ अपने बच्चों के कल्याण के लिए पर क्रोध करती है। यह माँ की भूमिका होती है। गुरु भी शिष्य पर क्रोध करते हैं जो शिष्य की भलाई के लिए होता है। यह क्रोध आवश्यक भी होता है। यह क्रोध आना नहीं है क्रोध करना है क्योंकि यदि हमें किसी को सही मार्ग पर लाना है तो उस पर क्रोध दिखाना पड़ेगा। वह क्रोध हानिकारक नहीं होता जो किसी के कल्याण के लिए किया जाता है। क्रोध के पीछे की भूमिका देखिए कि क्रोध क्यों आया इसके पीछे की भावना देखिए। इसके पीछे का प्रसंग देखिए। क्यों आ रहा है इसे पहचानें। धीरे-धीरे आना चाहिए, कौन सा नहीं आना चाहिए इसे पहचानेंगे। नहीं तो अन्याय के विरुद्ध हम लड़ेंगे नहीं। लव जिहाद में लड़की के पैंतीस टुकड़े करने के बाद भी क्रोध नहीं आएगा तो संपूर्ण समाज खण्डित ही हो जाएगा। कोई भी यह बात समझनी चाहिए कि क्रोध का पूर्ण त्याग करने पर कोई भी आकर हमें कुचल देगा। कल्याण के लिए क्रोध आना चाहिए परंतु अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए आने वाले क्रोध पर हम काबू करें। कई बार हम अधिकअपेक्षा या परफेक्शन के लिए जिसमें इतनी सामर्थ्य नहीं होती उन पर भी क्रोध करते हैं जैसे अपने सेवकों पर, यह सब हमें समझना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : रघु जी

प्रश्न - आपने बताया था भीम दो बार रोया था एक बार विकर्ण को मारने से पूर्व, और दूसरी बार किसके लिए?

उत्तर - वह कीचक का प्रसंग था। अज्ञातवास में कीचक ने, जो रानी सुदेष्णा का भाई था उसने द्रौपदी को लात मारी थी,पर भीम कुछ न कर पाए अतः अपनी विवशता पर रो पड़े।

प्रश्नकर्ता : प्रेमलता दीदी

प्रश्न - मैंने आपके विवेचन को सुना। सरल पठन की पुस्तकों को हम बड़े फोंट में चाहते हैं क्योंकि मेरे सभी साथी 60 वर्ष से ऊपर की आयु के हैं। दृष्टि संबंधी समस्याएँ हैं।

उत्तर - सरल पठनीय भगवद्गीत बडे print में उपलब्ध है।

प्रश्नकर्ता : उषा दीदी

प्रश्न- अगर हम अध्यात्म के रास्ते में चलते हैं और टीवी सीरियल आदि में रुचि नहीं रखते क्या यह गलत है? दीक्षा लेने के बाद मनुष्य में थोड़ी शान्ति तो आनी चाहिए या नहीं? सब परिवार के लोगों को इसमें शामिल होना चाहिए।

उत्तर -यह आध्यात्मिक यात्रा है यह सबकी अपनी अपनी अलग होती है। मेरे साथ मेरे परिवार जन भी जुड़ें यह इच्छा स्वभाविक है। आपको सीरियल देखने की इच्छा नहीं होती हमें गीता जी ने ऐसे कार्य में लगा दिया है कि उनसे बाहर जाने की इच्छा ही नहीं होती समय भी नहीं होता। कभी इच्छा होती है तो देख नहीं पाते। इच्छा होना कुछ गलत नहीं है। हम देह भूमिका में भी जीते हैं। यह कोई पाप नहीं है। अपनी रुचि के लिए या कर्त्तव्य मार्ग पर चलने के लिए भी हम अपना मनोरंजन करते हैं। कोई दूसरा अपना मनोरंजन कर रहा है उन पर ताना ना कसें। किसी को नीचा ना दिखाते हुए किसी की आलोचना ना करते हुए कैसे जीवन जीना है यह मैंने निजी जीवन में अपने बड़ों से सीखा है। परिवार में हम सबके साथ रहते हैं सबकी रुचियाँ भिन्न-भिन्न हो सकती हैं हमारे आध्यात्म के कारण घर में किसी तरह का टकराव की स्थिति ना आए। अध्यात्म का अर्थ= अधि

+आत्म अर्थात अपने अंदर प्रवेश करना। अंदर प्रवेश करने के लिए यह बहिरंग के सारे साधन है। यह अन्तर यात्रा है और इसमें भगवान का यह सन्देश सन्देश की जो इच्छा है वह करो अर्थात पूरी गीता सुनाने के बाद भगवान कहते जो इच्छा है वह करो। परिवार के लोग यदि साथ नहीं आते तो यह जाने अभी उनका समय नहीं आया है। सत्संग के मार्ग को आप अपने समान विचार वाले साथियों के साथ अपनाकर चलें। किसी को नीचा ना दिखा कर अपना अहंकार ना बढ़ाएँ। इन दोनों स्थितियों के कारण भगवान से विच्छेद हो जाता है और आनन्द चला जाता है।

प्रश्नकर्ता : सुभाष जी

प्रश्न - हम जिन अध्यायों कर चुके हैं उन सभी का विवेचन कुछ कारणों से सुन नहीं पाए तो क्या वे हमें यूट्यूब पर उपलब्ध है?

उत्तर - यूट्यूब पर उपलब्ध है लर्न गीता डॉट कॉम पर आपको नए पुराने सभी विवेचन मिल जाएंगे। आप किसी भी अध्याय का विवेचन सुन सकते हैं।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||

Sum-Hi-1(1_4)-VW-L3Feb23-190223/2440/v1/230221-1314